मनुष्य भी प्रकृति का अंश हैं

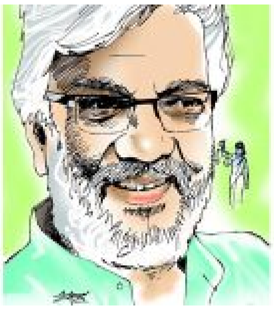

मनुष्य का आकार एक निश्चित क्रम में होता है ।जीव के जीवन में गति होती है ।जीव के जीवन में स्पंदन होता है ।प्रकृति सनातन है ।बिना स्पंदन के जीवन की कोई गति नहीं ।गतिहीन व्यक्ति समाज को आकार नहीं दे सकता ।गतिशील व्यक्ति ही समाज को तात्कालिक रूप से आकार देता आभासित महसूस होता हैं पर मूलत :यह मानवी ऊर्जा का अस्थायी एकत्रीकरण ही होता है ।गतिशीलता प्रकृति का सनातन स्वरूप हैं ।जीव प्रकृति का आकार है पर प्रकृति सनातन निराकार स्वरूप मे गतिशील रहकर प्रत्येक जीव को स्पंदित रखती है ।जीव का स्पंदन ही जीवन के सनातन आकार को गतिशीलता प्रदान करता हैं ।आकार से निराकार और निराकार से आकार की अभिव्यक्ति ही प्रकृति का सनातन स्वरूप हैं जो एक निरन्तर गतिशील स्वरूप में व्यक्ति से समाज में चेतना के स्वरूप में स्पंदित होती रहती है ।

मनुष्य के जन्म से याने साकार स्वरूप में आने से मृत्यु के क्षण याने निराकार में विलीन होने तक ही मनुष्य का व्यक्तिगत जीवन मानते हैं पर निराकार स्वरूप पाया मनुष्य , स्मृति स्वरूप जीवन का हिस्सा बन जाता हैं ।मनुष्य ही इस प्रकृति का अनूठा जीव है जो अपने निराकार विचारों को साकार करने की क्षमता रखता हैं ।इस धरती पर ही मनुष्य ने जीवन के रहस्यों को जानने ,समझने और उजागर करने के जितने प्रयास किये हैं उतने अन्य किसी जीव ने नहीं ।इसी से मनुष्य के मन में प्रकृति पर विजय का विचार जड़ जमाता जा रहा हैं ।

प्रकृति मनुष्य को जी भर खेल खेलने देती हैं,मनुष्य को रोकती नहीं ।पर अपने निराकार और सनातन स्वरूप से मनुष्य के मन में यह भाव बार बार पैदा करती है कि मनुष्य और प्रकृति के बीच सम्बन्ध जय पराजय के नही अनन्त सहजीवन के हैं ।मनुष्यों के जीवन भर हाड़ तोड़ मेहनत के पश्चात्त अधिकतर मनुष्यों को यह आत्म ज्ञान कालक्रमानुसार हो जाता है कि मनुष्य भी मूलत :प्रकृति का अंश ही है उससे कम या ज्यादा नहीं ।मूलत :प्रकृति और मनुष्य एक दूसरे से ऐसे घुले मिले या मिले जुले है की मूलत :दोनों को एक दूसरे से पृथक किया ही नहीं जा सकता है ।इसे समझने के लिये यह धरती,मनुष्य,सारे जीव जन्तु,पेड़ पौधे सब पंचतत्वों से अभिव्यक्त हुए हैं इन सब के आकार स्वरूप में भिन्नता होते हुए भी जीवन और स्पंदन में अभिन्नता होती है ।

मनुष्य अपने कृतित्व और विचारों से खुद भी और दूसरें मनुष्यों से भी प्रभावित होता हैं और एक दूसरे को परस्पर प्रभावित भी करता है ।मनुष्य में मानवीय मूल्यों को समाज में विस्तारित करने और लोगों के बीच नफरत,कटुता,वैमनस्य का विस्तार करने की भी बराबरी से क्षमता होती है ।मोहब्बत और नफ़रत,अपनत्व और कटुता,सौमनस्य और वैमनस्य उठती गिरती लहरों की तरह ही मन की

अभिव्यक्तियां हैं जो हर मनुष्य के मन मस्तिष्क में दिन रात की तरह आती जाती रहती हैं।

मनुष्य चिन्ता और चिन्तन सतत करते रहते हैं।ये दोनों मनुष्य की प्रकृति के हिस्से हैं।पर प्रकृति इस झंझट से दूर हैं।न चिन्ता न चिन्तन,न वैमनस्य न सौमनस्य,न मोहब्बत न नफरत,न अपनत्व न कटुता।प्रकृति में कोई भाव ही नहीं हैं इससे प्रकृति में कभी कोई अभाव नहीं होता।इसी से प्रकृति सदैव प्राकृतस्वरुप में होती है।एक क्रम में निरन्तर हर क्षण है ,हर कहीं व्याप्त है ,अपने सनातन प्राकृत स्वरूप में।

प्रकृति ने मनुष्य को अभिव्यक्त किया साथ ही अपने को हर रूप, रंग और भाव में अपने स्वभाव अनुरूप अभिव्यक्त करने की क्षमता दी।पर प्रकृति ने कभी अपने रूप,रंग और स्वभाव में काल अनुसार बदलाव नहीं किया सदा सर्वदा अपने सनातन प्राकृतिक स्वरूप में निरन्तर जीव और जीवन के क्रम को सदा सर्वदा से और सदा सर्वदा के लिये स्पंदित और गतिशील रखा और रखेगी।यह प्रकृति का प्राकृत और सनातन स्वरूप हैं।

कभी कभी मनुष्यों को यह लगता है कि मनुष्य के कृतित्व ने प्रकृति याने कुदरत के क्रम को बदल दिया है।कभी कभी हमें यह लगने लगता है कि हमारा जीवन अप्राकृतिक हो गया है।हमें अपना जीवन प्राकृतिक बनाना चाहिये।

हमारा विकास प्राकृतिक रूप से होना चाहिये। यहां फिर एक सवाल उठता हैं की मनुष्य खुद ही जब प्रकृति का अंश हैं तो वह अप्राकृतिक कैसे हो सकता है ?

क्या प्रकृति अपने अंश में अप्राकृतिक हो सकती है ?क्या मनुष्य की प्रकृति अप्राकृतिक हो सकती है ?दोनों ही स्थितियां संभव नहीं हैं।हमारी इस धरती पर मनुष्यों की जितनी संख्या आज जिस रूप ,आकार या संख्या में हैं उतनी संख्या में ज्ञात इतिहास में एक साथ कभी नहीं रहीं।आज धरती पर प्रकृति को मनुष्यों या जीव जन्तु,पेड़ पौधों से कोई समस्या नहीं हैं।पर इस धरती पर जितने भी मनुष्य है उन

सबको एक न एक समस्या एक दूसरे से जरूर है।आज के अधिकांश मनुष्य परस्पर एक दूसरे को सहयोगी साथी न समझ समस्या समझने लगे हैं यही हम सब की समझ में हुआ बुनियादी फेरबदल है जिसमें हम सब उलझ गये हैं।

मनुष्य की प्रकृति में समाधान कम समस्यायें ज्यादा दिखाई पड़ रही हैं।मनुष्य का जीवन भौतिक संसाधनों पर ज्यादा अवलम्बित होता जा रहा हैं।मनुष्य की जिन्दगी में राज्य और बाज़ार के संसाधनो की बाढ़ आगयी।इससे मनुष्य की प्रकृति और प्रवृत्ति में मूलभूत बदलाव यह दिखाई देने लगा हैं कि हम सब एक बड़े दर्शक समाज में बदलने लगे हैं।मनुष्य की प्रकृति एकांगी होते रहने से मनुष्यों की दूसरे समकालीन मनुष्यों के प्रति सोच और व्यवहार में एक अजीब सा बनावटी पन दिन ब दिन बढ़ता ही जा रहा हैं।

मनुष्य का मनुष्य के प्रति और प्रकृति के प्रति बुनियादी नजरिया व्यापक से संकुचित वृत्ति की ओर बढ़ रहा है। एक स्थिति यह भी उभर रही है की आर्थिक सम्रद्धि के विस्फोट से मनुष्यों का वैश्विक आवागमन एकाएक बहुत बढ़ गया है।इससे भी मनुष्य की मूल प्रकृति और प्रवृत्ति में बुनियादी बदलाव हुआ है जिससे सामान्य मनुष्यों के मन में भी यह भाव जग रहा हैं की पैसे की ताकत से धरती और प्रकृति के साथ जो मन में आवे वह कर सकते हैं।इसी से अधिकतर मनुष्यों के जीवन की अवधारणा और प्रकृति ही सिकुड़ गयी है।इतनी व्यापक धरती और प्रकृति और इतना एकांगी मनुष्य जीवन ,विचारऔर व्यवहार समूची दुनिया में उभरा मानवीय संकट है जिससे प्रकृति के विराट स्वरुप की तरह व्यक्तिगत जीवन में व्यापक होकर हम सब इस संकट से उबर सकते हैं।

अनिल त्रिवेदी
अभिभाषक ,स्वतंत्र लेखक ,किसान
त्रिवेदी परिसर,304/2भोलाराम उस्ताद मार्ग ग्राम पिंपल्याराव ए बी रोड़ इन्दौर म प्र
Email aniltrivedi.advocate@gmail.com
Mob 9329947486